समुदाय व संरक्षण

समुदाय आधारित जैवविविधता संरक्षण तथा आजीविका सुरक्षा

अंक ७, नं.१ जनवरी - जून २०१६

विषय सूंची

प्रारंभिक विचार

१. सूचना और समाचार
- एफ.ए.ओ. का सहेजे और ऊगाये पहल को टिकाऊ कृषि के लिये बड़े स्तर पर अपनाने का आग्रह
- राष्ट्रीय परमाकल्चर सम्मेलन
- हिमालय के किनारों पर भारत का पहला जैविक राज्य
- किसानों का सूखें के डर से मोटे आनाज की खेती से जीवन यापन का रास्ता

२. परिप्रेक्ष्य
- वैश्विक खाद्य प्रणाली की चुनौतियां
- बीजों का बचाव
- प्रधानमंत्री को पत्र

३. अतिथि स्तंभ
- आपकी खरीदारी के थैले में क्या है?

४. चिंतन
- हरेला
- कुछ शिक्षाविदों को बुलाओ

५. आशा की किरण
- केडिया गाँव का परिस्थितिकीय कृषि पर परीक्षण

६. चर्चित व्यक्ति
- खेत से स्कूल की किताबों तक–नटवर सारंगी सफलता के बीज बोते है

७. चर्चित राज्य
- जैविक सिक्किम–खेतों में अहिंसा

८. नयी किताब
- बोधशाला में शिक्षा–अपना समुदायिक स्कूल

अच्छे खाद्य पर विशेषांक

प्रारंभिक विचार

दुनिया के बहुत से लोगों के लिए अपने भोजन को खरीदने और हासिल करने को लेकर संघर्ष में दिनप्रतिदिन लगातार बढ़ोत्तरी हो रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुमान के अनुसार दुनियां में लगभग ८०० मिलियन लोग कुपोषण का शिकार हैं और अरबों लोगों के पास स्थायी और सुरक्षित अच्छे भोजन के अक्सर उपलब्ध नही है। इसके अलावा वर्तमान की स्थिति से जुड़ा एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा भोजन की बर्बादी से जुड़ा हुआ है। यह ऐसे गंभिर परिस्थिति में भूजल के स्तर में गिरावट, पर्यावरण प्रदूषण, जैवविधता की हानि और इनसे जुड़ी अन्य चिंतायें हरित क्रांति मॉडल अंत होने की तरफ इशारा करती हैं। २०५० में विश्व जनसंख्या को भोजन उपलब्ध कराने के लिए हमें उपलब्ध कुल कृषि योग्य भूमि और जलवायु परिवर्तन की वास्तविकता को स्वीकार करते हुए विश्व में खाद्य उत्पादन को ६० प्रतिशत दर से बढ़ाना होगा।

१९५० के दशक में शुरु हुए आधुनिक कृषि के तरीकों (जिसे पूंजीवादी मांडल के आधार पर तैयार किया गया है) से साफ है कि ये तरीकों ज्यादा संसाधनों, जीवश्वम ईधन, उर्वरकों और कीटनाशकों के इस्तेमाल पर निर्भर है। बड़े पैमाने पर उत्पादन पर आधारित यह व्यवस्था लंबे समय तक विश्व को भोजन नही खिला सकती है क्योकि उत्पादन पर्यावरण और परिस्थितकीय संकट के साथ भूमि, जल और संसाधनों की उपलब्धता से जुड़ा हुआ है।

वर्तमान में मानवता के सामने कई चुनौतियां है। इन चुनौतियों में मुख्य रुप से संसाधनों की कमी, जनसंख्या वृद्धि, कम भूमि की उपलब्धता और उस का इस्तेमाल, बढ़ती हुई पानी की कमी और मिट्टी का क्षरण शामिल है। इस स्थिति को संयुक्त राष्ट्र संघ के भोजन के अधिकार कार्यक्रम से जुड़े हिलाल ईलवर इस प्रकार देखते हैं कि ''उत्पादन और उपभोग करने वालों के बीच भौगोलिक और वितरण को लेकर असंतुलन है।'' उनका यह विचार स्थित को और गंभीर बताता है।

इस स्थिति में क्या किया जाये?

खाद्य संप्रभुता से इस स्थिति का समाधान हो सकता हैं। इसके लिए जरुरी है कि सरकार छोटे किसानों को सरकारी सहायता सुनिश्चित करे । छोटे किसानों को लेकर हिलाल बताते है कि ''अगर हम छोटे किसानों से जुड़ते है तो हम भूख के साथ खाद्य उत्पादन से जुड़ी समस्याओं का समाधान भी कर सकते हैं।'' सरकारों को चाहियें कि वह कमजोर और भोजन की जरुरत वाले छोटे किसानों की भूमिका को स्वीकार करे और उनको मान्यता तय करे । क्योकि, छोटे किसान भोजन की जरुरतों को पूरा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते है। ईलवर इसका समर्थन करते हुये कहते है कि ''अनुभव और तथ्य बताते है कि छोटे किसानों विश्व को भोजन खिलाते है।'' छोटे किसानों के पक्ष में संयुक्त राष्ट्रसंघ के खाद्य और कृषि संगठन (एफ. ए. ओ.) ने यह तथ्य बताया कि ''हमारे इस्तेमाल किये जाने वाले कुल भोजन का ७० प्रतिशत छोटे किसानों के पास से आता है।'' यदि यह सच्चाई है तो इसका मतलब यह है कि भोजन से जुड़ी नीतियों में बदलाव कृषि व्यवसाय से हटकर छोटे किसानों की तरफ ध्यान होना चाहिए। क्योंकि ''भोजन से जुड़ी वो नीतियां जो विश्व की भूख से जुड़े मूल कारणों के समाधान से नही जुड़ी हुई हैं, ऐसी नीतियां असफल होंगी।'' इसके लिये जरुरी है कि हम 'कृषि लोकतंत्र' की ओर जायें जिससे हमारे गाँव के छोटे किसान सशक्त होंगे। हालहि में ऐसे दो समझौते विश्व के स्तर पर हुये है जो मील का पत्थर साबित हो सकते है। इन दो समझौतों में पहला समझौता सतत विकास के लक्ष्यों (यस. डी. जी.) से जुड़ा है। जिसमें यह जरुरी किया गया कि २०३० तक भूख को समाप्त और भूमि की परिस्थितकीय तत्व को मजबूत स्तर पर लाया जायें। जबकि, दूसरा समझौता जल वायु परिवर्तन (कांप-२१) से जुड़ा है जिसमें यह सहमति बनी है कि नवीन समावेशी खाद्य व्यवस्था की जरुरतों पर जोर दिया जायेगा। इस स्थिति से निपटने के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता हैं। उदाहरण के तौर पर, 'एफ. ए. ओ. के द्वारा प्रोत्साहित सहेजे और ऊगाये' कार्यक्रम के लिये विश्वभर में किये गये अध्ययन बताते है कि किये जा रहे प्रयासों को मुख्य अनाजों के संबंध में सफलत मिली है जो कृषि के मजबूत और टिकाऊ भविष्य के रास्ते की ओर इशारा करती है। एफ. ए. ओ. के डायरेक्टर जनरल जोस ग्रैजियानो डिसिल्वा बताते है कि ''गरीबी उन्मूलन और जलवायु परिवर्तन से जुड़ी अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं के लिए जरुरी है कि चल रहे प्रयासों को टिकाऊ और समावेशी कृषि में अधिक पैदावार की ओर ले जाये।'' 'सहेजे और उगाये' पहल का व्यापक आधार है जिसमें पर्यावरण की अनुकूलता, कृषि उत्पादन बढाने के लिये टिकाऊ कृषि, कृषि के प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा और विस्तार, पृथ्वी की प्राकृतिक परिस्थितकीय प्रक्रियाओं को ध्यान में रखते हुयें रसायनिक चीजों में निर्भरता को कम करना और किसानों की आमदनी को बढ़ाना शामिल है।

हालाकि, खादय संप्रभुता का अर्थ केवल छोटे किसानों के द्वारा किये जाने वाले ज्यादा उत्पादन और वितरण के नियंत्रण करने तक सीमित नही है। बल्कि, इसका संबध विकेन्द्रीकरण, समृद्ध कृषि जैवविविधता की सुरक्षा, लिंग समानता, जाति सशक्तिकरण और भागीदारी वाली कृषि से भी है। सहेजे और ऊगायें खाद्य संप्रभुता की दिशा में पहला और महत्वपूर्ण कदम हो सकता है लेकिन अपने आप में यह शायद ही पर्याप्त होगा। मौलिक समानता और सामाजिक न्याय के लिये जरुरी है कि कुछ सवालों जैसे भोजन का उत्पादन कैसे होता है और उत्पादन वितरण किसके नियंत्रण में है, को लेकर और ज्यादा रचनात्मक सोच हो। इसके साथ ही समय की मांग है कि ऐसे महत्वपूर्ण क्रांतिकारी सशक्त उपायों को जायें जो वैज्ञानिक तो हो पर

जी.एम (अनुवांशिक संबंधित) नही हो और टीकाऊ और समानता वाली छोटी कृषि से जुड़े हो। इसके साथ ऐसे सुरक्षित विक्ल्पों की आवश्यकता है जो परंपरिक ज्ञान व्यवस्था पर आधारित हो, जिनका आधुनिक विज्ञान के साथ विवाद नही हो बल्कि जरुरत पड़ने पर सलाह को माने, हमारी कृषि जैवविविधता की सुरक्षा को तय करते हो, सामाजिक न्याय की गारंटी करते हो, जिसमें निर्णय प्रक्रियां का विकेन्द्रीकरण हो, स्थायी उत्पादन की व्यवस्था की सुरक्षा करने के साथ समुदाय की सशक्त भागीदारी की गारंटी करती हो।

ऐसा ही एक रास्ता कृषि परिस्थितिकीय का है जिसके लिये हो रहे प्रयासों को सम्मान मिल रहा है। क्योंकि यह समावेशी, भागीदारी विकेन्द्रीकरण, अजीविका उपलब्ध कराने, शहरों की ओर पलायन की स्थिति को सुधारने, छोटे किसानों को सशक्त करने और परिवारिक कृषि के तरीकों को बढ़ाने का वादा करती है।[१]

कृषी परिस्थितिकीय अपने आप में परंपरिक ज्ञान और आधुनिक कृषि शोध की प्रगति से निकला एक विज्ञान है। इसमें तत्कालिन परिस्थितिकीय तत्वों का इस्तेमाल, मिट्टी का जीव विज्ञान और कीटों का जैविक नियंत्रण शामिल है। यह समाज को सक्रिय बनाती है क्योंकि कृषी परिस्थितिकीय भागीदारी वाली होने के साथ ऐसी व्यवस्था या नेटवर्क के निर्माण से जुड़ी है जिसमें जरुरत के अनुसार बादलाव हो सके क्योंकि इसके बिना यह काम करेगी।

यह कृषि बहुत प्रजातंत्रिक भी है। इसके प्रजातंत्रिक होने का कारण इसमें स्थानीय संसाधनों का इस्तेमाल (जिसमें मुख्यरुप से छोटे और मझौली या मध्यम स्तर की कृषि और कृषि समुदाय शामिल हैं) यह जलवायु परिवर्तन की समस्या के समाधान के लिये बहुत उपयुक्त होने के साथ–साथ सूखें और बाढ की स्थिति का सामना करने में भी बहुत कारगर है। जबकि दूसरी ओर एकरूपता वाली कृषि है जो विश्व के कृषि जगत में अपने वर्चस्व को बनाने की ओर बढ़ रही है जो अपने अनुवांशिक और परिस्थितिकीय एकरूपता के कारण बढ़ते हुये तापमान के प्रति ज्यादा संवेदनशील है। परिवारिक किसान स्थानीय ज्ञान और स्थायी और नवीन कृषि के तरीकों से उत्पादकता बढ़ाने के साथ विविधता और पोषक भोजन की व्यवस्था को बना सकते है। परिवारिक कृषि से जुड़े किसान नये रोजगार के निर्माण, अर्थव्यवस्था में तेंजी, लाखों लोगों को रोजगार देने के साथ–साथ स्थानीय बाजारों को विकसित करते है। छोटे और मध्यम आकार के परिवारों के लिये कृषि परिस्थितिकीय सबसे ज्यादा उपयुक्त है और नगरीकरण को व्यवस्थित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है। क्योकि यह उत्पादन की प्रक्रियां के विकेन्द्रीकरण और स्थानीय खाद्य बाजार के माध्यम से वितरण को नियंत्रण करने में आसान है। इसके अलावा यह खाद्य के भंडारों को होनेवाले नुकसान को भी कम करने में भी सहायता करता है। कृषि परिस्थितिकीय केवल विज्ञान नही है बल्कि यह मान्यता और सम्मान देने वाले न्याय से जुड़ा एक आंदोलन है। यह आंदोलन किसानों के अधिकार–कि वो क्या और कैसे ऊगाना चाहते है, इसको तय करने के साथ उपभोक्ताओं के अच्छे भोजन के अधिकारों का भी सम्मान करता है। इसप्रकार इस कृषि ने कृषि की समस्याओं और किसानों की आत्महत्याओं से जुड़ी नयी उदारवादी निजी (प्राइवेट) कृषि व्यवस्था के सामने बड़ी चुनौती खड़ी की है। यह कार्ल मार्क्स के अवलोकन कि ''पूंजीवादी व्यवस्था तर्क संगत कृषि के विपरीत चलाती है.... और समाज को अपने लिये काम करने वाले छोटे किसानों की आवश्यकता होती है या उनसे जुड़े उत्पादकों के नियंत्रण की'' के पक्ष में है और इसका व्यवहारिक समाधान भी देती है।

आइये हमसब एक क्रांति को बोते है।

मिलिंद

---

१. http//himalmag.com/sowing-revolution.

१. सूचना और समाचार

एफ.ए.ओ का उसके सहेजे और ऊगाओ पहल को टिकाऊ कृषि के लिये बड़े स्तर पर अपनाने का आग्रह

१८ जनवरी २०१६ को एफ.ए.ओ की प्रकाशित किताब में बताया गया है कि विश्व के महत्त्वपूर्ण अनाज जिसमें बाजरा, चावल और गेहूं शामिल है और जो मिलकर लगभग ४२.५ प्रतिशत मानव की जरुरतों को पूरा करते है। साथ में ३७ प्रतिशत प्रोटीन की जरुरतों को भी पूरा करते है। इन आनाजों को उन तरीकों से उगाया जा सकता है जो प्राकृति को प्राकृतिक व्यवस्थाओं का सम्मान करते हुयें उसको स्वस्थ बनाते है।

स्रोत: http://www.fao.org/news/story/en/item/379724/icode/

राष्ट्रीय परमाकल्चर सम्मेलन

राष्ट्रीय परमाकल्चर सम्मेलन का आयोजन ५ से ७ फरवरी २०१६ को आयोजित किया गया जिसमें ११८० परमाकल्चर से जुड़े लोगों ने हिस्सा लिया इस आयोजन में इन लोगों ने आपस में मिलकर परमाकल्चर के बढ़ते क्षेत्र, पर्यावरण के पक्ष में कृषि के तरीकों और स्थायीत्व के बारे में अपने अनुभवों और अच्छे तरीकों को साझा किया। इस सम्मेलन में विचार–विमर्श, प्रदर्शन और प्रदर्शिनी को शामिल किया गया। परमाकल्चर अंग्रेजी के दो शब्दों 'Permanenet Agriculture' (टिकाऊ, कृषि) का विस्तार है। इसका आशय प्राकृतिक संसाधनों के बुद्धिमानी से ऐसा इस्तेमाल करने से है जो वर्तमान और भविष्य की पीढ़ी के जीवन को बनाये रखे। यह एक दर्शन और रास्ता है जो लोगों को ऐसी व्यवस्था को तैयार करने और उसको स्थापित करने के लायक बनाता है जो उनके भोजन, उर्जा, छत और अन्य भौतिक और अभौतिक जरुरतों को प्रकृतिक व्यवस्थाओं के साथ समाजस्य के साथ उपलब्ध कराता है।

स्रोत: http://npcindia2016.Org/

हिमालय के किनारे पर भारत का पहला जैविक राज्य

भारत का उत्तर–पूर्वी राज्य और नेपाल और भूटान के बीच स्थित सिक्किम ने अपनी खेती की जमीन को कीटनाशकों और रासायनिक ऊर्वरकों से छुटकारा दिलाने के लिये देश का पहला जैविक राज्य बन रहा है।

राज्य की ७५००० हेक्टर क्षेत्र को भारत सरकार के जैविक उत्पादन वाले क्षेत्र में बढ़ता गया है। यह कृषि का एक प्रकार है जिसमें कीटनाशकों, उर्वरकों और अनुवांशिक रूप से संबर्धित फसलों और अन्य कृत्रिम चीजों का इस्तेमाल नही होता है। इसके बदले किसान प्राकृतिक विकल्पों जैसे हरी या प्रकृतिक खाद और कंपोस्ट का इस्तेमाल करते है। सिक्किम जैविक मिशन के कार्यकारी निर्देशक यस. अंबालागान ने जनवरी १४ को प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया को बताया कि 'दिसंबर के अंत तक हमने पूरी तरह से जैविक होने का स्थान हासिल कर लिया है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी गंगटोक में १८ जनवरी को स्थायी कृषि के सम्मेलन में इसकी घोषणा करेंगे।'

स्रोत : http://qz.com/595408/in-a-corner-of-the-himalayas-india-now-has-its-first-organic-state

किसानों का सूखें के डर से मोटे आनाज की खेंती से जीवन यापन का रास्ता

जब उडीसा के २५ जिलों के किसानों को सूखें ने बुरी तरह प्रभावित किया था उसी समय कंघमाल जिले के कम चर्चित या गुमनाम गाँव के रहने वाले विपिन माझी इस विपदा से बचे रहे थे। क्योकि उन्नहोने अपने खेतों में मोटे अनाजों की खेती की थी। पूरी तरह सूखें की स्थिति के बावजूद भी कंघमाल, रायगादा, गाज्पति और कालाहांडी जिलें के आदिवासी समुदायों ने मोटे आनाजों का अच्छा उत्पादन किया था जो आदिवसियों के मुख्य भोजन में पसंदीदा है।

माझी बताते है कि 'मैने एक एकड के खेत में धान बोया था लेकिन इस साल बारिश बिल्कुल नही होने के कारण पूरी फसल बर्बाद हो गयी। वही दूसरी तरफ मोटे अनाजों ने जिसमें ज्यादा मेहनत की जरुरत नही होती है उसने मुझे निराश नही किया। अब गाँव के ज्यादातर लोग पूरे साल मोटे आनाजों की खेती करते है।'

कंघमाल जिले के बिरिंगिरा गाँव कि महिला किसान रंजीया दिगाल का अनुभव भी ऐसा ही था। आप ने बताया कि 'हालाकि मोटे आनाजों का उत्पादन हमारी आशाओं के अनुरूप (जैसा) नही हुआ था लेकिन इससाल सूखें के समय यह धान के जैसी आपदा नही थी।'

कंघमाल, देवगढ़, मयूरभंज और रायगादा के किसानों ने स्वयंसेवी संगठन निर्माण और मिलेट नेटवर्क के द्वारा आयोजित ओडिसा राज्य स्तरीय कार्यशाला भोजन के लिये मोटे आनाज और पोषण सुरक्षा और भोजन उत्सव में अपने घर के पीछे ऊगाये जानेवाले मिलेट के तरीको और परंपरिक ज्ञान को लोगों के साथ साझा किया था। निर्माण के डायरेक्टर प्रशांत मोहंती जो सालों से मोटे आनाजों को फसल को फिर से स्थापित करने की दिशा में काम कर रहे है बताते है कि 'समय के साथ मोटे आनाजों की खेती करने वाले किसानों की संख्या में कमी आयी है। सरकारी आंकडों के अनुसार मोटे अनाज और दूसरी परंपरिक फसलें १९७८–७९ के दौरान ५.४९ लाख हेक्टेयर क्षेत्र में उगाई जाती थी लेकिन यह क्षेत्र घटकर २.०१ लाख हेक्टेयर पर आ गया है।'

मोंहती का कहना है कि 'महिलायें जो परिवार के अलग–अलग कामों को करती है और साथ में मोटे आनाजों से भूसे या भूसी अलग करने जैसे मेहनत और तनाव वाले काम को करती है। भूसी अलग करने के उपयुक्त प्राथमिक तकनीकी तरीकों के नही होने के कारण किसानों को उनके मोटे आनाजों की उचित कीमत नही मिल पाती है।'

स्रोत: http://www.thehindu.com/news/national/other-states/millet-growers-survive-drought-scare/article8052011.ece

◆◆

२. परिप्रेक्ष्य

वैश्विक खाद्य प्रणाली की चुनौतियाँ

विश्व बजारों को बड़ी मात्रा में खाद्यान आनाजों को उपलब्ध कराने पर आधारित हरित क्रांति वाला कृषि मांडल पूरे विश्व में स्थापित हो चुका है। यह औद्योगिक कृषि व्यवस्था रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के इस्तेमाल से एक प्रकार के ज्यादा उत्पादन पर केन्द्रित है। हलाकि छोटे स्तर की विविधता और परंपरिक कृषि व्यवस्था को अनुउत्पादक बता दिया गया है। परंपरिक पोषकता देने वाली फसलें जैसे शोरगम और क्विनाओ[२] की किस्में खेतों से दूर हो गयी है जिसका परिणाम यह हुआ है कि विश्व की जनसंख्या को भोजन से मिलने वाली कुल उर्जा का ६० प्रतिशत केवल चावल, बाजरा और गेहूं से मिलता है। गेहूं जैसे मुख्य खाद्य पदार्थों की कुल उपज में बढ़ोत्तरी भी अन्य फसलों की कीमतों में गिरावट के लिये जिम्मेदार है। जबकि, दालों, फलों और सब्जियों जैसी अधिक पौष्टिकता से जुड़ी फसलों की उपलब्धता में कमी आयी है।

औद्योगिक कृषि के आस–पास ही औद्योगिक खाद्य व्यवस्था का विकास हुआ है। जिसमें कुछ कंपनियां ही व्यापर, प्रसंस्कारण और वितरण के साथ–साथ खुदरा क्षेत्र को नियंत्रित करती है। व्यवसायिक संरचना और वैश्विक खाद्य पूर्ती (उपलब्ध कराने) की व्यवस्था ने बुरी तरह से स्थानीय खाद्य और खपत की व्यवस्था को प्रभावित किया है। विकासशील देश प्राय: वैश्विक बाजार से इस प्रकार जुड़ जाते है कि १) नकदी फसलों जैसे पाम तेल का निर्यात करते हैं जिसका इस्तेमाल कंपनियों द्वारा सस्तें कच्चेमाल के तौर पर अधिक प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों को बनाने में करते हैं २) कीमती उत्पादों जैसे उष्णकटिबंधीय फलों को विश्व के उत्तर दिशा में स्थित देशों को देते है और उनसे अनाजों का आयात करते है। इसका परिणाम यह होता है कि मुख्य फसलों और अधिक पौष्टिक भोजन के बीच कीमतों का अंतर स्थानीय बाजार में बढ जाता है। जिसकी सच्चाई यह है कि विकासशील देशों के गरीब उपभोक्ता अपने भोजन के लिये मुख्य रूप से सस्ती मुख्य फसलों पर निर्भर रहना पड़ता है। कम पोषकता वाले आहार या भोजन की मौजूदगी में और जैवविविधता की हानि में खाद्य क्षेत्र से जुड़े उद्योगों का योगदान है। इसके पीछे का कारण अधिक प्रसंस्कारित खाद्य पदार्थों का उत्पादन कुछ सीमित चीजों से होता है। इसके अन्य नकारात्मक परिणामों में लगातार बनी हुई खाने की कमी, सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी, बड़े क्षेत्र में हो रही मिट्टी का क्षरण, पानी और पर्यावरण में गिरावट, ग्रीन हाउस गैसों का ज्यादा उत्सर्जन और दुनियांभर के किसानों की आजीविका को लेकर तनाव शामिल है। नेस्ले, कोको और दनोन जैसी कंपनियां अपने उत्पादों को बेचे जाने वाले बाजार को बढ़ाने के लिये उत्पादों के लिये कीमत इतनी रखते है कि कीमत विश्व की जनसंख्या के बड़े समूह से जुड़ी हो। यह संभव है क्योकि ये चीजें या उत्पाद सस्ती सामग्री जैसे संतृप्त बसा मिलों में तैयार आनाज की चीजों और चीनी से तैयार किये जाते है। अंतर्राष्ट्रीय खाद्य कंपनियों का मानना है कि उनके बाजार का विस्तार और विकास विश्व के दक्षिण में है। जिसके लिये उनका जोर मुक्त व्यापार और निवेंश के समझौतों के साथ यह भी प्रयास रहता है कि स्थानीय परंपरिक वितरण प्रणाली को अपने नियंत्रण में रखे। जिसका परिणाम यह है कि भूख की समस्या और पोषक तत्वों की कमी की चुनौतियां ज्यो का त्यो बनी हुई और इसके साथ बढ़ते हुये बजन और डयबटीज जैसी बीमारियां भी शामिल हो गयी है। विश्व के सभी १९३ देशों में तीन मे से एक व्यक्ति कुपोषण का शिकार है। कुपोषण के कई प्रकार एक ही देश में; एक परिवार में और यहां तक कि एक ही व्यक्ति में हो सकते है।

वर्तमान व्यापार और कृषि से जुड़ी नीतियां बडे उत्पादकों और उद्योगों की सहायता करती है। जबकि, कृषि परिस्थितिकीय उत्पादन व्यवस्था से जुड़े परिवारिक किसानों को बहुत कम सहायता दी जाती है जो पर्यावरण को मुस्कान पहुंचाये बिना ग्रामीण और शहरी लोगों को पौष्टिक भोजन दे सकते है। कृषि से जुड़े कार्यक्रमों में ८ प्रतिशत से भी कम खर्च किये जाने के बाद भी इससे फायदे मिल रहे है। हमारे सामने कई उदाहरण है जो इसके फायदें को बताते है। ब्राजील सरकार ने परिवारिक कृषि से जुड़े छोटे किसानों से खरीदी करने के लिये एक व्यवस्था को बनाया है जिसका उद्देश्य छोटे किसानों को बाजार उपलब्ध कराना और सरकारी संस्थानों जैसे स्कूलों को स्वस्थ और ताजा भोजन की उपलब्धता को तय करना है। इसके अलावा खाद्य नीति परिषदों को बनाकर इससे जन समूह/समाज के लोगों को जोडा गया है। इसके पीछे उद्देश्य है कि खाद्य व्यवस्था स्थानीय और प्रजातंत्रिक बने। यह खाद्य परिषदों विभिन्न संबंधित लोग (जिसमें किसानों, राज्य और शहर के अधिकारियों, गैर सरकारी संगठनों, खाना बनाने वाले रसोइयों, खाद्य बांटने वालों, भोजन के न्याय पर काम करने वाले लोगों, शिक्षकों और संबंधित लोगों को शामिल किया गया है।) एक साथ लाकर खाद्य नीतियों से जुड़ी साझा चिंताओं के समाधान के लिये एक मंच देती है। यह परिषद संबंधित लोगों को उनकी अपनी चिंताओं को साझा करने और साझा उद्देशों पर काम करने के लिये साथ लाती हैं। परिषद को बनाने के पीछे खाद्य नीतियों/नीति को प्रभावी बनाना है जिससे कि प्रजातांत्रिक खाद्य व्यवस्था को सहायता मिल सके।

स्रोत: http://foodfirst.org/wp-content/uploads/2014/DR21-Food-Policy-Councils-Lessons-Learned-pdf

---

२. क्विनाओं का मुख्य स्थान पेरू, बोलीविया, कोलंबिया और चीली हैं। ३ से ४ हजार साल पहले लोगों के इस्तेमाल के लिये इसको अपनाया गया था। इसका घरेलू उपयोग टिटिकाका बेसिन में सबसे पहले हुआ। पुरातत्विक साक्ष्य बतातें है कि ५,२०० से ७००० वर्ष पहले चरवाहों के झुड में इसका इस्तेमाल होता था।

लेखक : सारा सचनेडर (sarah.schneider@misereor.de) आप मिसोरियर के नीति और वैश्विक चुनौतियां विभाग में भोजन और कृषि अधिकारी के पद पर कार्य कर रही है। आपका मुख्य काम पोषण और कृषि परिस्थितिकीय पर है।

बीजों का बचाव

यह बीज का चमत्कार ही हैं कि छोटी चीज अपने में एक पूरे पेड़ को जन्म देने की क्षमता को समेटे हुये है। इस वादे के साथ की चीजें होगी वास्तव में एक आशा प्रदान करती है। सोचो वह कैसा संसार होगा जब बीजों को मिट्टी में पहुचने के लिये जिस स्थान पर वह जडे जमाता है वहाँ तक पहुचने के लिये यह जरूरी होगा की उसके लिये पैसे का लेन–देन हो, उस पर लेबल लगे और बाहर से थोपी गयी व्यवस्थाओं की जटिल प्रक्रियां से गुजरना पड़ेगा । यहां बड़ा बेतुका लगता है लेकिन विश्व स्तर पर देश के स्तर पर ऐसी कई ताकतें है जो इस स्थिति की ओर व्यवस्था को ले जा रही है। इसके बावजूद यह सुकून की बात है कि ऐसे भी लोग है जो इसका विरोध कर रहे है।

वह कौन लोग है?

ऐसे लोग बीज बचाने वाले है। ऐसे लोग शायद पुरानी कांच की बोतलों, मिट्टी के बर्तनों, प्लास्टिक के थैले या पुराने बरदानों (एक प्रकार का बर्तन) में बीजों को रखकर बचा सकते है। इन लोगों के रास्ते अलग–अलग हो सकते है। कुछ लोग बीज बैंक स्थापित करके बैच बनाकर वर्षों तक संरक्षित करने पर ध्यान लगाये हुयें है। जबकि कुछ लोगों का मानना है कि बीजों को बचाने का एक मात्र स्थान खेत है। इन लोगों में समानता यह है कि सभी लोग बीजों की विविधता को जीवित रखने के लिये सहायता कर रहे है जो लाखों वर्षों से चली आ रही परंपरा के पक्ष में एक मौन क्रांति है।

किसान इस उद्देश्य के लिये अपने खेतों या खेतों के नेटवर्क का इस्तेमाल करते है। उत्तराखंड के जरदार गाँव के बीज बचाओं अंदोलन से जुड़े विजय जरदारी ने अपने अथक प्रयासों से धान की ३५० किस्मों, गेहूं की ८ किस्मों, जौ की ४ किस्मों, सेम की २२० किस्मों, लोबिया की ८ किस्मों और दाल की १२ विभिन्न किस्मों जिसे नवरंगी दल कहते है के बीजों को संरक्षित किया है। ओडिसा के २ एकड़ के खेत में जिसे वसुधा के नाम से जाना जाता है उस खेत में देबल देव ने १९९६ से अपने प्रयासों की शुरुआत करके अब तक धान की विविधता को संरक्षित करने के लिये १००० से ज्यादा किस्मों को संरक्षित किया है। तेलंगाना के जहीराबाद में दक्कन डवलपमेंट सोसाइटी सदस्या ५५ वर्षीय अंजमा गंगावार गाँव में बीज बैंक चलाती है जो स्थानीय किसानों को बीज बेचने वाली बहुराष्ट्रीय कंपनियों से स्वतंत्र करती है। डेवलपमेंट सोसाइटी की महिला किसान प्रत्येक वर्ष एक माह तक क्षेत्र के ५० गाँवों में यात्रा करके परिस्थितिकीय कृषी का उत्सव मनाने के लिये मोबाइल विविधता उत्सव का आयोजन करती है। टिम्बक्टू कलेक्टिव आंध्र प्रदेश के १५७ गाँवों में फैला हुआ है। इस पहल में चावल की २८ किस्मों, मोटे अनाजों के ३१ प्रकार, १८ प्रकार की दालों और ७ प्रकार के तेल के बीजों का दस्तावेजी करण किया है। मध्यप्रदेश के सतना जिले, उचेहरा ब्लाक के पियौराबाद गाँव के बाबूलाल दाहिया ने अपने प्रयासों से धान की ८० किस्मों से अधिक किस्मों के साथ देशी मक्का, सामा, काकुन, कुटकी, कोदों और कटिया गेंहू की किस्मों को संरक्षित किया है। तमिलनाडु के आंरोविले की दीपिका कुंदाजी ने अपने २००० वर्ग मीटर के छोटे से स्थान में बैगन की २० किस्मों को संरक्षित किया है। देश के विभिन्न हिस्सों में चल रहे कई प्रयोगों में से ये कुछ प्रयास है जिनका उद्देश्य बीजों को बचाना है।

इस तरह के प्रयासों से जुड़े कई संगठन और समूह भी है जो समुदायिक बीज बैंक या बीजों को साझा करने के नेटवर्क में सहायता कर रहे है। इसका एक उदाहरण उत्तरांचल में चल रहा नवदान्या है। नवदान्या ने अपने जैविक खेत में एक बीज विद्यापीठ नाम के अध्ययन केंद्र की स्थापना की है। इसके अलावा हमारे चावल को बचाओं अभियान है जो केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक और पश्चिम बंगाल राज्य में सक्रिय है।

इसके अलावा बीज उत्सवों को आयोजित करने वाले लेखक और अभियान को चलाने वले लोग भी है। अप्रैल २०१४ में राष्ट्रीय स्तर पर भारत के १८ राज्यों की १०० समर्पित बीज समितियों के साथ मिलकर भारत बींज स्वराज मंच का गठन किया था।

यह भी सच्चाई है कि देश के लाखों छोटे किसानों (विशेष तौर पर महिला किसान) और खेती से जुड़े परिवारों का बींज बचाने वालों में नाम नही आता हैं और उनकी अनदेखी हो जाती है। इसके बावजूद भी ऐसे लोग अभियान की महत्त्वपूर्ण कडी है। क्योकि इन लोगों ने बींज बचाने और स्थानीय किस्मों को उपजाने की संस्कृति और परंपरा को जीवित रखा है। ये लोग वही है जिससे प्रसिद्ध बीज बचाने वालों ने बीजों को लिया है। नयी नीतियों और बाजार की ताकतों के फैलने के साथ स्थिति बदल रही है लेकिन अभी भी किसानों के परिवारों और लोगों का ऐसे स्थान या क्षेत्र है जहां बीजों को बचाने का प्रयास और किस्में स्थापित हैं। ऐसा मुख्य रूप से पुराने किसानों में ज्यादा देखा गया है।

परेशान क्यो?

किसान और फसल के बीच सदियों पुराने संबंध ने बीज के किस्मों के साथ विभिन्न लक्ष्णों जैसे स्थानीय परिस्थितिकीय के प्रति उपयुक्तता, सूक्ष्म पोषण, औषधि के गुणों, कीटों के प्रति प्रतिरोधकता और कुछ स्थितियों में सौंदर्य को विकसित किया है। बीजों की यह विविधता वर्तमान के जलवायु परिवर्तन की स्थिति और इससे जुड़ी वर्षा के प्रारुप में और मौसम में अनुमान नही लगा सकने वाले बदलाव की हकीकत में खाद्य सुरक्षा के लिये और भी महत्त्व की हो जाती है। इस विविधता को जीवित रखना ही केवल पर्याप्त नही है बल्कि इसकी स्थानीय किसानों के लिये उपलब्धता भी जरुरी है।

जैसाकि हमने देखा है कि बीजों के इस मुक्त प्रवाह के सामने खतरा है। स्थानीय स्तर पर परिस्थितिकीय अनुकूल परंपरिक किस्मों की विविधता में तेजी से गिरावट आयी है। अब लंबे समय के लिये नीतियों और प्रक्रियाओं के साथ कृषि में बदलाव को ऐसी दिशा में लेजाया गया है जहां पर कुछ फसलों की संकरित किस्मों (जिनके प्रत्येक वर्ष अच्छे परिणाम के लिये नये बींज खरीदने पडते है) ने धनी विविधता वाली और कई स्थानीय किस्मों की जगह लेली है। यदि बीज बिल (प्रस्तावित कानून) पर अमल किया जाता है तो किसानों को अपने बीजों को बेचना अपराध की श्रेणी में आने का खतरा है। यदि ऐसा होता है तो बीज से जुड़ा पूरा बाजार का नियंत्रण निजी हाथों में चला जायेगा। पहले से ही शीर्ष या चोटी के तीन कृषि जैवतकनिकी के प्रतिष्ठान मोनसेंटो, ड्यूपॉन्ट और सिन्जेटा का विश्व के कुल बीज बाजार के व्यवसाय के ५३ प्रतिशत पर नियंत्रण रखे हुये है। इन सभी खतरों से जुड़े भ्रम में बीजों पर बौद्धिक संपदा के अधिकारों का आयाम भी जुड़ा हुआ है। इससे जुड़ी कई है जो उन कई किसानों के समूहों के सिद्धांत के खिलाफ है जो बीजों का समुदायिक घरोहर मानते है। जबकि, ब्जोमसेंटॉ जैसे कार्पोरेशन ने जलवायु अनुरूप फसलों के १५०० पैटेंटों को हासिल कर लिया है।

बीजों को लेकर भारतीय किसानों को सुरक्षित रहने और कर्जों से मुक्ति के लिये जरूरी है कि बिना किसी पैसें के लेनदेन के स्वतंत्र रूप से बीजों का आदान–प्रदान हो। इसके लिये बीजों में नियंत्रण के एकाधिकार का सामना करने की जरुरत है। २०१५ में चंडीगढ़ में भारत बीज स्वाराज मंच के सदस्यों ने यह संकल्प किया था कि भारत में यहां की धनी परंपरिक फसलों और किस्मों को फिर से उपजाने और बड़े स्तर पर साझा करेगे। उनका यह प्रयास किसी के लिये भी मुक्त घरोहर होगी और किसी भी निजी/ कार्पोरेट के बौद्धिक संपदा के अधिकारों से स्वतंत्र होगा। नरेन्द मोदी और बराक ओबामा को (भारतीय और अमेरिकी नागरिकों द्वारा) लिखे गयें पत्र में यह संदेश दिया गया है कि जीवन कोई अविष्कार नही है, जैव चोरी नवीनता नही है और बीजों को बचाना मौलिक अधिकार है।

इसके समाधान का एक मात्र रास्ता खादय संप्रभुता है।

लेखक – शीबा देसोर (desor.shiba@gmail.com) आप कल्पवृक्ष की सदस्य है और आप समाजिक परिस्थितिकीय पर काम कर रही है।

बीज बचाओ आंदोलन के विजय जरदारी के प्रधानमंत्री को लिखे गयें पत्र का कुछ अंश[३]

यहाँ पहाड़ो पर जलवायु अच्छी नही है। हमलोग चैत (मार्च–अप्रैल) के महिने में ठंड से ठिठुर रहे है।

बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री और यमनोत्री के साथ अन्य पहाड़ियां बेमौसम बर्फ से ढकी हुई है। कृषि और कृषि कार्य अच्छी स्थिति में होने से कोसों दूर है। जबकि कुछ स्थानों में मानसून के बाद रबी की बोवाई सूखें के कारण नही हो सकी हैं और खेती के स्थानों में भारी बारिश और बर्फ गिर रही हैं।

मुझे याद है कि २५–३० वर्ष पहले हमारे देश में बसंत, ग्रीष्म, बरसात, शिशिर, हेमंत और शरद ६ ऋतुयें एक निर्धारित क्रम में होती थी। हमारे किसान एक नियत समय में बीज बोते, निराई–गुडाई और कटाई करते थे।

उनके काम में हवा, पानी और मौसम कोई बाधा नही थे। हर किसान के घर का पीछे का स्थान घरेलू मवेशियों (गाय, बैल, बछडों, भैंसो) से भरा होता था और हमारे जल के स्रोत (चाल, खाल, तालाब, बावडियाँ)

पानी से भरे होते थे। गाँव के जंगल जानवरों और मवेशियों को पर्याप्त भोजन (चारा) उपलब्ध कराने के साथ में कृषि में जरूरी उपकरणों को लिये लकडी भी देते थे। हमारे खेत, भंडार और घर अनाजों, दालों, तिलहन, साग– सब्जी और हरियाली से भरे रहते थे। ये सभी पोषक चीजें लोगों को अच्छा स्वास्थ और खुशी देती थी और बिमारी दूर रहती थी। राष्ट्रापिता महात्मा गांधी इसलिए अक्सर ग्राम स्वराज्य लाने की बात किया करते थे।

लेकिन आजकल गाँवो से बुरी खबर आ रही है। हालत यह है कि खेतों के न तो सुरक्षित बीज और खाद और नाही खादय पुसलों की विविधता बची है। हमारे घरेलू मवेशियों की घंटी की आवाज की जगह टेक्टरों की कर्कश आवाज ने ले ली है। जैविक उर्वरकों की जगह आंखो में आंसू देने वाली रासायनिक खादों ने लेली है। मौसम के असमान व्यवहार के आलावा किसानों को कई तरह की परेशानियों का सामना करना पड रहा है। अपने जरूर सुना होगा कि कैसे ३ लाख से ज्यादा लोगों ने आत्महत्यां की है लेकिन उनकों केवल चुनावों के समय याद किया जाता है।

'बीज प्रकृति की रचना का एक महत्त्वपूर्ण तत्व है। इसको किसी वैज्ञानिक या व्यवसायी ने प्रयोगशाला में नही बनाया है। हजारों वर्ष पहले किसानों के पूर्वजों ने जंगलों से चुनके बीजों को इक्कठा किया था और पूर्वजों की तरह फसल की विभिन्न किस्मों को इजात किया था। ये वही बीज है जिसपर वैज्ञानिक शोध करके नये बीजों की रचना करते है। यह कितना गलत है कि खेती किसान करते है लेकिन बीजों को बहुराष्ट्रीय कंपनियों से लिया जायें। यह किसानों के साथ बहुत बड़ा धोखा है।'

बड़े मालों, बड़ी तकनीकी के शहर जैसे लवासा, सीधे विदेशी निवेंश (एफ.डी.आई) और विशेष आर्थिक क्षेत्र (यस.ई.जेड) के लिये राष्ट्रीय और बहुराष्ट्रीय कंपनियों को किसानों की जीविका से जुड़ी उपजाऊ भूमि को देना कोई साधारण नही बल्कि गंभीर अन्याय है। सरकार के प्रतिनिधि यह तर्क देते है कि किसानों को अच्छा मुआवजा मिलेगा। जमीन के बदले पैसे का आदान प्रदान

३. हिन्दी पत्र को आप http://vikalpsangam.org/static/media/uploads/Food%20water/vijayji_10_page_letterpm.pdf और इंग्लिश अनुवाद को http://www.ecologise.in/wp-content/uploads/2015/11/Vijay-Jardhari-Letter-eng.pdf. में देख सकते है यह अनुवाद शीबा देसोर द्वारा किया गया है।

पहाड़ों में प्रचलित एक कहावत की याद दिलाती है कि नाक की नाथ खरीदने के लिये नाव को बेचना। उपजाऊ भूमि अचल संपत्ति होती है। पैसे कितने दिनों के लिये होगे? और हमारी आने वाली पीढ़ी का क्या होगा?

'भारत सरकार अनुवांशिक रूप से तैयार बीजों को अपनाने के लिये अमेरिकी कंपनियों के दबाव में है।

उपलब्ध जानकारी बताती है कि जी.एम तकनीक परंपरिक बीजों के प्रति निर्णायक होगी और परंपरिक कृषि को दूषित करेगी।'

'सच्चाई यह है कि स्मार्ट क्लर्क एक अधिकारी, छोटा दुकानदार एक उद्योगपति और छोटा कस्बा शहर हो गया है और उच्च तकनीकी का इस्तेमाल हर स्तर पर हो रहा है। लेकिन, गाँव बंजर क्यो हो रहे है? किसान आत्महत्या क्यो कर रहे है? और हमारी नयी पीढ़ी शहरों की ओर पलायन मजदूरी के लिये क्यो कर रही है?'

'हमारे योजनाकारों ने शहरी और औद्योगिक विकास के लिये पश्चिमी मांडल को चुना है। अमेरिकी कृषि मांडल को चुनने से और गेहूं और चावल उत्पदकता बढ़ने से प्रशंसा हुई है लेकिन इसके बदले हमने अपनी जैवविविधता को खोया है। इसके परिणामस्वरूप हमने अपनी भोजन की विविधता को खोने के साथ आम आदमी कुपोषण और खतरनाक बिमारियों से पीड़ित है। बहुराष्ट्रीय कंपनियां कितनी चालक है। पहले ये कंपनियाँ रासायनिक उर्वरक, कीटकनाशक और खरपतवार नाशक लाती है और जब दूषित भोजन हमको बिमार बना देते है तो अच्छे स्वास्थ के लिये जीवन रक्षक दवाईयों को बताते है। विकास के नाम पर सरकार इनके व्यवसायों को मजबूत कर रही हैं।'

'मौसमी संतुलन बिगड चुका है। धनी विकसित देशों या हमारे देश के बड़े शहरों के लोग जलवायु को नुकसान पहुंचा रहे है और इसके नकारात्मक प्रभाव गरीब किसानों को सहना पड रहा है। क्या इससे बड़ा अन्याय हो सकता है? हमे किस आदालत में जाना चाहियें? एक फसल व्यवसाय और नगदी फसल की लालच ने कृषि में जीवन को बंजर बना दिया है। कभी-कभी ऐसा लगता है कि कृषि के विकास के नाम पर यह चालाकी जानबूझ कर की जा रही है ताकि कृषि नियंत्रण में चली जायें। जिसका परिणाम किसानों की आत्महत्या है।'

'लेकिन माननीय एक चीज याद रखने की है कि एक दिन परंपरिक ज्ञान और परंपरिक जैवविविधता का एक दिन महत्व होगा। हमलोग स्थायी कृषि पोषक भोजन, साफ हवा और पानी को लेकर आशान्वित है। लेकिन चिंता की बात विनाशकारी शहरी विकास और दबाने की संस्कृति है जिसने हमारे पुराने काले घने बादलों और एक हरी धरती के लिये संकट खडा किया है। हमें आशा है कि आप किसानों की भावना को समझेगे।'

◆◆

३. अतिथि स्तंभ

आपकी खरीदारी के थैले में क्या है?

विश्व खाद्य कार्यक्रम के अनुसार दुनियां में ८४२ मिलियन लोगों के पास खाने के लिये पर्याप्त भोजन नही होने के साथ ३.१ मिलियन बच्चों की मृत्यु कुपोषण से प्रत्येक वर्ष हो रही है। इसके अलावा दुनियाभर में एक बिलियन से ज्यादा लोग मोटापें से ग्रसित है और उसमें से कम से कम ३०० मिलियन लोग मेडिकल (चिकित्सीय) मोटापें से पीड़ित है। डाइबटीज के नक्शें में अनुमान लगाया गया है कि प्रत्येक ६ सेक्ण्ड में एक व्यक्ति की मृत्यु डाइबटीज के कारण हो रही है। डाइबटीज के कारण मरने वाले अधिकांश लोगों में डाइबटीज (टाइप-२) का होना पाया गया है। कृषि से जुड़ी संस्था कंपेशन इन बर्ड फार्मिंग के अनुसार हम विश्वभर में १० से १२ अरब लोगों को खिलाने के लिये पर्याप्त भोजन को उत्पादित करते है। इसका ३० प्रतिशत हिस्सा बर्बाद हो जाता है और लोगों के ओठों तक नही पहुंच पाता है। इसको नाकारा नही जा सकता है यदि हमारे वैश्विक खाद्य प्रणाली के बारे में विषम, अनुचित और अक्षम कहा जाये। वास्तविक कृषि अभियान[४] के संस्थापक कॉलियन टुडज बताते है कि कैसे हमे एक कृषि पुनर्जागरण की जरुरत है। इसके लिये वैश्विक, क्षेत्रीय और स्थानीय खाद्य व्यवस्था को नये तरीके से तैयार रस्ते में काम करने की जरुरत है। मै सोचता हूँ कि इससे मुझें सहमत होना चाहिये कि यह काम कोई आसान नही है।

ब्रिटेन का डेयरी उद्योग हमारे व्यापक वैश्विक खाद्य व्यवस्था का एक छोटा सा संसार है। स्थानीय, छोटे स्तर के उत्पादक उन बड़े उत्पादकों से प्रतिस्पर्धा नही कर सकते हैं जिनका की बाजार में नियंत्रण है। अनुदान और डेयरी उत्पादकी स्थानीय कीमतें बड़े उत्पादकों के पक्ष में है और शूमाकर का 'स्माल इज ब्यूटीफूल' (छोटा सुंदर होता है) विजन मुश्किल जान पड़ता है। पिछले ५० वर्षों में ९५ प्रतिशत से ज्यादा छोटे स्तर की डेयरी बंद हो चुकी है, क्योंकी किसान उत्पादन में आने वाली लगत से ज्यादा मूल्य पर दूध को नही बेच सकते है। इसके अलावा रोबोटिक तकनीक से दूध निकालने की प्रक्रियां के आने से बहुत कम लोग इसमें काम कर रहे हैं जिसका परिणाम यह हुआ है कि बहुत सी परंपरिक डेयरी फार्म की कहानियाँ और प्रथायें खो चुकी है। यहाँ अब स्थिति यह है कि बड़ी-बड़ी डेयरियों की संख्या लगातार बढ़ रही है और मुझको ऐसा लगता है कि यह स्थिति प्रत्येक के लिये स्वंय का व्यापक नयी उदारवादी व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करता है। दुग्ध संघो, सहकारी समितियों और समुदाय भी इस व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करता है। दुग्ध संघों, सहकारी समितियों और समुदाय भी इस व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करता है। दुग्ध संघो, सहकारी समितियों और समुदाय

४. देखे, http://www.campaignforrealfarming.org/

भी इस व्यवस्था से जुड़े है लेकिन इनका आकार जरुरत से अभी भी बहुत दूर है। हमारे सस्ते भोजन और दूध की मांग के कारण आज हालात यह है कि ब्रिटेन में दूध बोतल बंद पानी से सस्ता है। जिसका प्रभाव यह हुआ है कि किसानों और जानवरों के कल्याण के मानकों में गिरावट आयी है। १९९४ में दूध देने के मार्केटिंग बोर्ड को भंग कर दिया गया था।

बहुत से किसानों ने मुझे बताया कि इसने में उनको आपस में एक दूसरे के विरोध में खडा कर दिया था। ऐसा इसलिये किया गया था जिससे की वो अपना दूध जितना सस्ती लागत में हो सके उत्पादित करे और यह तय करे की सुपरबाजार और दूसरे फुटकर विक्रेता उनके दूध को खरीदे। बोर्ड जो कि पूरी तरह से प्रभावी नही था फिर भी उसके समय में किसानों को यह अनुमति थी कि वह अपने दूध को एक कीमत में बेचे और उनको मिलने वाला भुगतान भी सुरक्षित हो। प्रजातंत्र में भागीदारी करते है तो हमे कार्पोरेट सामाजिक जिम्मेदारी के बारे सवाल खड़ा करना चाहिये। जिससे संस्थायें सही मायनों में लोगों के प्रति पारदर्शी और जिम्मेदार हो क्योकि हमारी भोजन की पसंद नाटकीय तौर पर हमारी धरती का भविष्य संवारेगी।

यूके में भोजन के बर्बाद होने से रोकने के अभियान को चालाने वाली जन के सह निदेशक के तौर पर काम करते हुये मेरा मानना है कि नीतियों में बदलाव और लोगों की भागीदारी वाले कानून साथ में जन समूहों द्वारा कार्पोरेशनों (व्यवसायिक प्रतिष्ठान) पर दबाव डालकर बदलाव लाया जा सकता है। इन दो बड़े तरीकों से सकारात्मक बदलाव और अपनी खाद्य व्यवस्था को न्यायपूर्ण, पारदर्शी और सामाजिक तथा परिस्थितिकीय रुप में स्थायी बनाय जा सकता हैं। इन दोनों बदलावों का एक साथ होना महत्व रखता है क्योंकि एक–दूसरे के बिना इनका कोई मतलब या अर्थ नही है। हम भोजन से जुड़े विक्रेताओ और उद्योगों के स्वयं से बदलने का इंतजार नही कर सकते है क्योकि इनमें उपभोक्ताओं की मांग के बिना बदलाव नही होगा हमारा भोजन गहराई से राजनीति से जुड़ा हुआ हैं। इस सच्चाई को कोई नकार नही सकता है कि जब हम सुपर बाजार में जाकर जो कुछ भी अपनी टोकरी ट्राली में रुखते है उसे हम पसंद करे या नही वह रजनैतिक पसंद से होता है। समस्या यह है कि यदि हम सावधान नही है तो जल्दी ही हमारी पसंद हमसे दूर कर दी जायेगी और हमारे पस अपनी पसंद को पूरा करने के सीमित अवसर होगे।

हमारे पास हमारी खाद्य व्यवस्था को बनाने और बदलने के लिये एक महान संस्था है जो सकारात्मक तौर पर लोगों और अपनी धरती की सेवा करती है। मुझे इसका हमेशा संदेह रहता था कि कैसे कला पर्यावरण मुद्दों पर चर्चा करने का एक रास्ता हो सकती है। लेकिन मेरी सोच बदली और माना कि आपको अपने अनुभवों और खुशी के साथ लोगों से जुड़ना होगा। जलवायु परिवर्तन के गंभीर आंकडे और विमाश की भविष्य वाणी हमारे पृथ्वी के विनाश के समीप आने के डर और अनुभव को और बढ़ा देती है। मुझे मिल्क पार्लर ने जन समाज के नेतृत्व वाली लोककला और अभियान को चलाने के महत्व के बारे में सिखाया है। इसके अलावा अकेले या मिलकर हमेशा स्वयं के सीखने, सवाल करने और चल रही स्थिति को चुनौती देने के महत्त्व को भी सिखाया है। यदि हम सही मायनों में जब इसको भंग कर दिया गया और नयी उदारवादी व्यवस्था आयी तो डेयरी से जुड़े किसान प्रतिस्पर्धा करने में असमर्थ थे।.

मेरे लिये ब्रिटेन का डेयरी उद्योग यह बताता है कि हम अपने भोजन के बारे में कितना कम जानते है। जबकि इस क्षेत्र से राजनैतिक, आर्थिक और परिस्थितिकीय प्रक्रियाए शामिल है। हमारे भोजन से जुड़े ज्ञान और भोजन से संबंध के बीच की दूरी जितनी ज्यादा बढ़ेगी हम उतना ही कम अपनी जानकारी के आधार पर अपनी पसंद को बनायेगे। इसके साथ एक नागरिक के तौर पर न कि एक उपभोक्ता की तरह हमे अपने थैले में रखने के लिये क्या चुनना है इसकों तय नही कर पायेगे। औद्योगिक खाद्य व्यवस्था का व्यापारिक माँडल उन उपभोक्ताओं पर निर्भर करता है जो उनका भोजन देने वालों के बारे में जानकारी नही रखते है। यह माँडल उपभोक्ता संबंध की जगह दक्षता, इतिहास और कहानियों की जगह सस्तेपन को प्राथमिकता देते है। हमारे जीवन का परिदृश्य यूके के अत्यधिक दक्ष मशीनों की व्यवस्था में गुम हो गया है।

हमारे अपने भोजन के साथ संबंध के बारे में चर्चा शुरू करने के लिये एक प्रयास के तहत १८ महिने पहले मैने गायों के साथ रहना शुरू किया और गायों को दुहने के तरीकों को सीख रहा हूँ। इस साल अप्रैल में मैने एक मिल्क पार्लर को बनाया है। यह पार्लर लोगों के लिये एक प्रदर्शनी है जिसमें हमारे दूध से जुड़े संबंधो और मूल्यों को पता लगाने का प्रयास किया गया है। २०१५ में इंग्लैड के दक्षिण पश्चिमी शहर और यूरोप के हरित राजधानी शहर ब्रिसटल में मैने ग्वेर्नस गयों की शुद्ध नस्ल की दो गायों के साथ चार राते और पांच दिन गुजारे है। इस मिल्क पार्लर को कला के माध्यम से जलवायु परिवर्तन से जुड़े अभिमानों को चलाने वाली लंदन स्थिति संस्था केप फेयरवेल से सहायता प्राप्त है।

हमने व्यस्त सिटी स्ववायर में अस्थायी मिल्क पार्लर, गाय के रहने के स्थान और अपने और गाय की देख भाल करने वालों के सोने के स्थान को बनाकर इस स्थान को पूरी तरह से बदल दिया था जो दक्षिण पश्चिम में स्थित सबसे बड़े विज्ञान शिक्ष केंद्र के बगल में स्थित है।

दो गायों को लाने के पीछें की प्रेरणा सामान्य उद्देश्यों से बिल्कुल अलग थी। गायों का खेत शहर के बाहर है। इससे पता चलता है कि शहरों में रहने वालों को हमारे भोजन को उत्पादित करने वाला से मिलने का कितने कम अवसर मिलते है। प्रदर्शनी को लेकर मेरी सबसे बड़ी चिंता यह थी कि इसमें चर्चा किये गये मुद्दों पर लोग ध्यान नही देगे और इससे नही जुड़ेगे। लेकिन मेरा विचार गलत साबित हुआ। प्रदर्शनी के पांच दिन के दौरान लगभग ५०००

लोग आये और मुद्दों के समाधान को खोजने में उनकी भूमिका बहुत प्रेरणा देनेवाली थी। मेरा मानना है कि हमारी वर्तमान पूंजीवादी व्यवस्था चाहती है कि हम शक्तिहीन हो जाये और परिवर्तन के प्रति उदासीन रहे जैसेकि सरकार और व्यवस्था अचल और एकरूप है। पर यह सच्चाई नही है। विश्व में बदलाव तय है और हमारे जीवंत प्रजातंत्र जिसमें हम हिस्सा होना चाहते है। अनगिनत लोग (जिनमें अधिकतर लोग पर्यावरण से नही जुड़े है) निराश है। ये लोग यूके के डेयरी उद्योग के अलावा अन्य क्षेत्रों जैसे जैवविविधता की क्षति से जुड़ी चुनौतियों, जलवायु परिवर्तन, सामाजिक असमानताओं और उन अन्य समस्याओं जो औद्योगिक खाद्य और डेयरी उत्पादन से जुड़ी हैं उसके समाधान के लिये काम करना चाहते है।

लेखक: नेस्सि रीड (nessierid@gmail.com) आप के फेयरवेल से ग्रामीण (गाँव) कलाकार का तरह जुड़े हुये है।
वेबसाइट: www.themilkingparlour.org | @milkparlour

◆◆

४. चिंतन

हरेला

जी राया, जाग राया (आप का जीवन लंबा हो, आप स्वरूप हो)
यो दिनबार में भेंतने राया (इस दिन हमलोग मिलते रहे)
दुबक जास जाद हैंजोऊ (आपकी जड़े दूब (घास) की तरह फैले)
पेटजस पाउल हैंजाऊ (आप पेट[५] की तरह विकास करे)
स्यालक जास बुद्धि हैंजोऊ (आप सियार की तरह तेज हो)
बाघक जास त्रान हैंजोऊ (आप बाघ की तरह शक्तिशाली हो)
हिमालय मेनहुन हुन तक (जबतक कि हिमालय में बर्फ है)
गंगा मेन पान चानतक (गंगा में जब तक पानी है)
हरेला तोर मनाते राया (हम सब हरेला मनाते रहें)

नोट: हरेला कुमाऊं (उत्तराखंड) का विशेष त्योहार है। इसे चौमासे में सभी कृषि कार्यों के हो जाने के बाद मनाया जाता है। धान की रोपाई इस दिन तक पूरी कर ली जाती है। हरेला के दस दिन पहले लोग अपने घरों में उन सभी बीजों को बोते है जिनकी खेती उस मौसम में की जानी है। घर पर ऊगाइ गयी ७–८ फसलों को लोग एक दूसरे को अच्छी शुभकांमनाओं के साथ देते है।

५. पेट एक प्रकार की घास है जो बीजों को छिडकने (डालने) के बाद अगले दिन अंकुरित हो जाते है इनको चाहे कही भी डाला जाये।

कुछ शिक्षाविदों को बुलाओ?

इन नदियों के तट पर क्या है, डॉक्टर?
अपनी दूरबीनों को बाहर ले आओ
और अपने चश्में
देखों यदि देख सकते हो
पांच सौ फूल
आलू के पांच सौ विभिन्न प्रकार
छतों पर ऊगाये
एबेसेस के ऊपर
कि आपकी नजर नही पहुंचती है
वे पांच सौ फूल मरो दिमाग है
मेरा मांस

जोस मारिया अरग्युदास

◆◆

५. आशा की किरण

केडिया गाँव का परिस्थितिकीय कृषि पर परीक्षण

अगस्त २०१३ के उमस वाले एक दिन केडिया गाँव के दो किसान गाँव से लगभग १ किलोमीटर की दूरी पर स्थित पारों चौक में होने वाले किसानों के परामार्श में भागीदारी करने के लिये गाँव से जाते है। केडियाँ छोटा गाँव है जो बिहार के उत्तरी–पूर्वी जिले जमुई का हिस्सा है। यहां पर किसानों के परामर्श की शुरूआत एक नुक्कड नाटक से हुई जिसमें यह दिखाया गया कि कैसे एक आत्मनिर्भर किसान रासायनिक कृषि व्यवस्था के जाल में फस कर अपनी मिट्टी, जानवरों, जल स्रोतों और कृषि जैवविविधता को नष्ट कर देता है। केडिया गाँव के ७२ वर्षीय अनाच्छा यादव आसानी से अपने को नाटक की कहानी से जोड सकती है जैसा कि उनके अपने अनुभव से पता चलता है। यादव जी परामर्श की प्रक्रियां के दौरान खडे होकर बताते है कि आपकी कहानी पूरी तरह से सही है और हम इसकी पुष्टी करते है कि रासायनिक पदार्थों के ज्यादा इस्तेमाल के कारण हमारी कृषि बड़ी समस्या में है। हम समस्या से परिचित है और हम यह भी जानते है कि हमे रसायनों का इस्तेमाल रोक देना चाहिये। लेकिन हमे नही पता है कि यह कैसे किया जायें। क्या आप लोग हमारी इस पर मदद करेगे? परामर्श के आयोजकों के लिये यह अकेला उदाहरण नही था। इस तरह के २४ परामर्शों के आयोजन के दौरान ५००० से अधिक किसानों ने यह सवाल उठाया था। इन परामर्शों का आयोजन ग्रीनपीस भारत की जीवंत मिट्टी अभियान टीम ने किया था। परामर्श में भागीदारी करने वाले किसानों ने में से कुछ किसानों को यह जानकारी

थी कि बायोमास आधारित उर्वरकों के इस्तेमाल से और कम से कम रसायनों के इस्तेमाल से ही मिट्टी और खेती को जीवित किया जा सकता है। लेकिन, बायोमास की कमी के कारण किसान ऐसा करने में असमर्थ है। उन्नहोने यह भी बताया कि अधिकतर किसान कर्ज में दबे हुये है और वो जैविक खेती के लिये जरूरी सामान और इससे जुड़ी मूलभूत आवश्यकताओं में ज्यादा निवेंश नही कर सकते है।

परामर्श का अयोजन जीवंत मिट्टी कर्यक्रम से जुड़ी टीम के लिये लाभदायक साबित हुई क्योकि इससे टीम कों कृषि परिस्थितिकीय तरीकों को अपनानें से जुड़ी बाधाओं के बारे में पता चला जैसें

- बायोमास की उपलब्धता
- विस्तृत परिस्थितिकीय कृषिज्ञान की जरूरत
- इससे जुड़ी आधारभूत संरचना के लिये जरूरी धन
- किसानों को एक साथ लाना और उनका सशक्तिकरण विशेषतौर पर महिला किसानों का

इसके बाद जीवंत मिट्टी टीम ने इससे जुड़े उन किसानों, सरकार के अधिकारियों, जन समूहों, शिक्षाविदों और विशेषज्ञ समूहों के साथ कई बार परमर्श किया जो परिस्थितिकीय कृषि के तरीकों से मिट्टी के स्वास्थ और खेत की अर्थव्यवस्था को सुधारने की दिशा में काम कर रहे है।

इस प्रयास के बाद बायोमास आधारित परिस्थितिकीय कृषि मांडल को शामिल किया पक्षकरों की भूमिका रही है।

१) किसानों
२) बिहार सरकार के विभाग
३) ग्रीनपीस (भारत)

इस त्री-पक्षीय व्यवस्था में किसान महत्त्वपूर्ण कडी है क्योकि उनके द्वारा ही इसको अमल में लाया गया है। सरकारी विभाग अपनी योजनाओं के अनुदान को देने में भूमिका निभाते है। जबकि भारतीय ग्रीन पीस की भूमिका ज्ञान की प्रक्रिया को साझा करने और किसानों को एक साथ लाने की है। बतायें गये विषयों/मुद्दों को लेकर यह तय किया गया कि किसान स्वयं संगठित होकर सरकार से मांग करेगे। इसमें निर्णय हुआ कि कृषी विभाग बायोंगैस प्लांट स्थापित करेगा और बायों परिस्थितिकीय तरीकों से टॉयलेट बनायेगा साथ में मावेशियों के लिये पक्के स्थान का निर्माण करेगा जिससे कि गाँव में उत्पादित सभी प्रकार के बायोमास पदार्थों को संरक्षित किया जा सके। इसके साथ में किसानों की सोच में सकारात्मक बदलाव लाने और जमीन पर काम करने के लिये इस मांडल में ध्यान देने का निर्णय लिया गया।

अप्रैल २०१४ में केडिया गाँव में इस मांडल की शुरूआत हुई थी। तब से ही किसानों ने ऊपर बतायी गयी प्रक्रिया में भागीदारी की और इसको अपनाने के काम में तेजी लायी। पहले चरण में १० किसानों ने वर्मी कंपोस्टिग (जैविक खाद) प्लांट को लगाने के लिये मिलने वाले सरकारी अनुदानों के लिये आवेदन दिया था। अनुदान की प्रक्रियां लंबी होने और संबंधित अधिकारियों के असहयोग वाले व्यवहार के बावजूद किसानों की मजबूत सामूहिक मांग के बाद इस प्रकार की ६० यूनिटों या प्लांटो को तैयार किया गया है।

इसबीच जीवंत मृदा टीम ने हरल खाद-प्लांट सुरक्षा समाधान अमृतपानी किसानों को उपलब्ध कराया था। कई बार किये गये किसानों के परामार्श से आयी जागरूकता का परिणाम यह हुआ है कि इस समाधान ने बहुत अच्छी तरह से काम किया और धान की खेती में रासायनिक पदार्थों में ५० प्रतिशत की कमी को रिकार्ड किया गया। इसका एक महत्त्वपूर्ण पहलू यह भी था कि रासायनिक कीटकनाशकों का इस्तेमाल लगभग नही हुआ था। रबी की फसल के समय अमृतपानी को बड़ी मात्रा में तैयार और इस्तेमाल किया गया और इसी दौरान वर्मीकंपोस्ट की पहली किस्त मिट्टी को मिली थी। मानव और जानवरों की यूरिन को रासायनिक यूरिया के विकल्प के तौर पर इस्तेमाल किया गया था। १० से अधिक किसानों ने यह तय किया कि वो अपनी जमीन का एक हिस्सा परिस्थितिकीय उर्वरकों और पौधों की सुरक्षा के समाधान को तैयार करने के लिये देगे। इससे जुड़े किसानों की उपज रासायनिक तरीकों से खेती करने वाले किसानों से तुलना करने वाली थी। कृषि रसायनों के आंगे भी इस्तेमाल में कमी को दर्ज किया गया था। मार्च २०१५ तक गाँव में सरकार की सहायता से १६२ वर्मीकपोस्टिंग की यूनिटों को लगाया जा चुका है और एक बायोगैस प्लांट को भी स्थापित किया गया है। २०१५ में ऐसे मौसम में जब खेती का समय नही होता है तो जीवंत मृदा टीम ने यह निर्धारित किया कि किसान अपने जानवरों को अपने खेतों में रखेगे जिससे कि जानवरों का अपशिष्ट सीधे मिट्टी को मिले। पहले इस तरीके को किसानों द्वारा किया जाता था लेकिन पिछले ४०-५० वर्षों में रासायनिक खेती को बढ़ावा देने के कारण इसको भूल चुके है। इस प्रक्रियां ने अपने आप में मिट्टी को बड़े तौर पर फिर से जीवंत बनाने में मदद की है जो धान की खेती के लिये तैयार थी। इसके बाद होने वाली फसलों में रसायनों के इस्तेमाल में ७० से ७५ प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गयी थी। इस दौरान कीटकनशकों की एक बूंद का इस्तेमाल भी नही हुआ था और सबसे बड़ी सच्चाई यह थी कि उत्पादकता में कोई कमी नही आयी थी।

दूसरे रबी की कृषि के समय स्थानीय पौधों की पत्तियों, तंबाकू की चूल जानवरों की यूरिन और गोबर से बने खाद को और पौधों को दिये जाने वाले पोषक तत्त्वों और सुरक्षा के उपायों को अपनाया गया। इससे रसायन के इस्तेमाल और खेती की लागत में कमी आने के साथ महत्वपूर्ण स्तर पर मृदा परिस्थितिकीय का स्वाद अच्छा हुआ है जो जलवायु के पक्ष में भी एक कदम है।

किसानों में संतुष्टता है और उनका संकल्प है कि और ज्यादा कृषि भूमि को परिस्थितिकीय कृषि के अंदर लायेगे। इस प्रयास के कारण गाँव की जैवविविधता भी धीरे-धीरे बढ़ रही है। अब्ब स्थिति यह है कि स्थानीय प्रशासन ने इस मांडल को अपने मांडल के तौर पर अपनाया है और इसमे किसानों और ग्रीन पीस (भारत) के योगदान

को मान्यता दी है। बरहाट ब्लाक के कृषि अधिकारी मोहम्मंद ने ग्रीन पीस के निर्देशक रवि चेलम और पर्यावरणविद् आशीष कोठारी के साथ मीटिंग में बताया है कि यह केडिया गाँव में आयी जागरूकता की देन है कि जमुई जिले में यूरिया की खपत में २४ प्रतिशत की कमी आयी है।

केडिया गाँव के किसानों ने रसायनिक कृषि से परिस्थितिकीय कृषी की ओर जाकर अपने लिये एक विशेष स्थान बनाया है। इन किसानों ने पूरी तरह से रासायनिक कीटनाशकों का इस्तेमाल रोक दिया है और रासायनिक खाद के इस्तेमाल में ७० प्रतिशत की कमी आयी है। जिसका परिणाम यह है कि आने वाली कृषि लागत में ३० से ३५ प्रतिशत की बचत हुई है। इसके साथ ही मिट्टी में बायोमास की मात्रा बढ़ने के कारण मिट्टी के जल धारण करने की क्षमता तेजी से बढ़ी है और मिट्टी के तापमान में कमी आयी है। परिस्थितिकीय कृषि पर आधारित फसलें अनिश्चित तापमान और वर्षा के प्रति ज्यादा लचीली है या दूसरे शब्दों में अपना उत्पादन देने में सक्षम है। किसान को खुशी है कि उन्नहोने रासायनिक कृषि से मुक्त होने का फैसला किया है।

परिस्थितिकीय के रास्ते पर चलने के लिये संबंधित तीन आधारों को उनकी अपनी वर्तमान स्थिति को बदलने का प्रयास इस पहल के द्वारा किया गया है। यह पहल उनको आपस में संवाद के साथ प्रकृति और अन्य संबंधित लोगों से भी संवाद करने के नये कौशल को सीखने में मदद करता है।

बिहार ग्रामीण जीवंत मृदा मांडल के बारे में:–

अप्रैल २०१४ में इस मांड्ल की शुरुआत बिहार में हुई थी। इसकी शुरूआत कृषि से जुड़े परिस्थितिकीय और आर्थिक मुद्दों के समाधान को खोजने के लिये किया गया था। इसके तहत प्रयास किया गया कि कृषि जैवविविधता और परिस्थितिकीय के घटकों को जीवंत करने का प्रयास किया गया है। इस प्रयास को साझा ज्ञान और किसानों के सशक्तिकरण से सफल बनाया गया है। इस मांडल के द्वारा यह भी प्रयास किया गया है कि परिस्थितिकीय उर्वरता, बायोमास संरक्षण और इनकी गुणवत्ता को बढ़ाने के लिये नये तरीकों और विकल्पों को तलाशा जायें। इसके साथ ही इस मांडल में उत्पादक किसानों को उपभोक्ताओं के साथ साफ सुथरे व्यापार के तरीकों के द्वारा जोडने और समाज के आर्थिक रूप से कमजोर समुदायों को सुरक्षित भोजन की उपलब्धता का भी प्रयास है।

लेखक : इश्तियाक अहमद (ishteyaque.ahmed@greenpeace.org) ग्रीन पीस भारत के अभियान से वर्ष २०१३ से जुड़े हुये है। इसके पहले आप विविधधारा, बीजबचाओं आंदोलन श्रुति, प्रभा और पुनश्का के साथ काम कर चुके है और १९८४ से आप नाट्य क्षेत्र से जुड़े रहे है। आप केडिया गाँव में बिहार जीवंत मृदा माँडल को विकसित करने में आपकी भी भूमिका रही है।

◆◆

६. चर्चित व्यक्ति

खेत से स्कूल की किताबों तक नटवर सारंगी सफलता के बीज बोते है

ओड़िसा के कटक जिले के चर्चित और मशहूर किसान नटवर सारंगी की जैविक खेती की तकनीकों को आंध्रप्रदेश और तेलंगाना राज्य में ९ वी कक्षा के पाठ्यक्रम में जगह दी गयी है।

नटवर जी की तकनीकों को भारतीय कृषि के उदाहरण के तौर पर दो राज्यों का समाजिक अध्ययन की पुस्तक में शामिल किया है। इन राज्यों के विद्यार्थी सीख रहे है कि कैसे बिना उर्वरको और कीटनाशकों के इस्तेमाल से अधिक उत्पादन वाली स्वदेशी धान की किस्मों को उगाया जाता है। नटवर जी निआली के नारीशो के गाँव के निवासी है। सेवानिवृत्त स्कूल शिक्षक नटवरजी पिछले १० सालों से अधिक समय से जैविक खेती करते आ रहें आपने अपने प्रयासों से धान की ४०० किस्मों को संरक्षित किया है जो लगभग लुप्त हो चुकी थी।

आपने बताया है कि आपकी कुछ धान की किस्मों से एक एकड़ में २० क्विंटल तक का उत्पादन होता है। यह उत्पादन किसानों के उर्वरकों और कीटनाशकों के इस्तेमाल से कथित उच्च उत्पादक किस्मों से बहुत ज्यादा हैं। जैवखाद और प्राकृतिक कीटनाशक के इस्तेमाल से आने वाली लागत से बहुत कम है। नटवर जी बताते है कि गाय का गोबर, खराब सब्जियों, फलों और हरी चीजों का इस्तेमाल जैव उर्वरकों के तौर पर होता है जो प्रतिदिन बिना किसी खर्चे के मिल जाते है।

इसके पहले कुछ अधिकारियों और व्यापारियों से प्रभावित हो कर नटवर जी ने रासायनिक उर्वरकों और कीटकनाशकों का इस्तेमाल करना शुरू किया था। एक दिन उनका एक मजदूर जो कर्बोफुरन (एकबेहद जहरीला कीटकनाशक) का खेतों में छिडकाव करने के एक घंटे के अंदर बेहोश हो गया था। इसके अलावा उन्नहोने अपने खेत में कई मरे हुये सांपों; घोंघो, मेढ़कों और केचुओं को पाया तभी उनको यह अहसास हुआ कि कैसे ये रसायन हमारी प्राकृतिक व्यवस्था को विषैला बना रहे है। इसके बाद आपने प्राकृतिक खेती को अपनाया। नटवर जी ने अपने ५ एकड के खेतों और आस–पास के क्षेत्र में खेती करते हुये अबतक धान की ४०० किस्मों को संरक्षित किया है। नटवर जी बताते है कि संरक्षित किस्में कीटकनाशकों के प्रति लचीली होती है और उनको कम पानी की जरूरत होती है और विपरीत मौसम में भी जीवित रहने के साथ जैविक कृषी के लिये उपयुक्त भी होते है। इसके अलावा स्वदेशी धान के बीजों के इस्तेमाल और उपयुक्त जैविक तरीके से तैयार कृषि उत्पाद में एक विशेष स्वाद, सुगंध और ज्यादा पोषकता होती है। बहुत से ऐसे बीज भी है जो सूखे, बाढ़ और खारे पानी के प्रति प्रतिरोधकता रखते है या इनका सामना करते हुये उत्पादन देते है। सारंगी जी बताते है कि स्वदेशी बीजों के इस्तेमाल से खेती की लागत में भी बहुत ज्यादा कमी आती है।

वर्तमान में नटवर जी अपने गाँव के १२ एकड़ के खेत में परंपरिक बीजों का उत्पादन करने के तरीकों का प्रदर्शन लोगों के लिये करते है। आपने कुंघेरी नहर के पास देशी धान चासा गाबेसाना केंद्र (एक शोध केंद्र) की स्थापना की है जिसमें किसानों को जैविक खेती के बारे में प्रशिक्षण दिया जाता है।

स्रोत: http://www.nweindianexpress.com/states/odisha/From-farmaland-to-school-textbooks-Natabar-Sarangi-sows-seeds-of-success//article 3438621.ece

◆◆

७. चर्चित राज्य

जैविक सिक्किम–खेतों में अहिंसा

चंद्रप्रकाश धी मेरे अपने सीढ़ीदार खेतों से नीचे आते हुये दूर किनारों तक फैले इलायची के खेतों की ओर इशारा करते है। हमलोग पूर्वी सिक्किम के रांका गाँव में है जो कि भारत में सबसे बड़ा इलायची उत्पादक राज्य है। पिछले वर्ष यह राज्य भारत का पूरी तरह से जैविक खेती अपनाने वाला पहला राज्य बनने के कारण विश्व में सुर्खियों में रहा था। धी मेरे को आशा है कि जैविक सिक्किम राज्य में आर्थिक विकास की लहर की संभावनाओं को बढ़ायेगा । इलायची यहां का एक महत्त्वपूर्ण मसाला फसल है।

चंद्रप्रकाश ने तीन एकड़ जमीन लीज पर ली है जहां पर आप फलों और सब्जियों को मिश्रित रूप से उगा रहे है। धी मेरे ने दो वर्षों पहले पूरी तरह से जैविक खेती करने का निर्णय किया था। आप बताते है कि वर्तमान में आपका कृषि उत्पादन पूरी क्षमता का नही है लेकिन आने वाले एक वर्ष में पूरी क्षमता का होगा उन्नहोने बताया कि मै ओर मेरी पत्नी बहुत मेहनत कर रहे है और सरकार प्रशिक्षण और एक्सपोजर के लिये दौरों की सुविधा देकर सहयोग कर रही है।

राज्य के मुख्य सचिव बताते है कि यह अहिंसा खेती है। जब आप जैविक तरीकों से खेती करते है तो आप अपनी धरती माँ को नही मारते है। सिक्किम में पर्यटन बहुत से लोगों की रोजी–रोटी है और राज्य की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार है। भूटिया बताते है कि हमारी जनसंख्या ६ लाख है और पिछले साल ११ लाख पर्यटक सिक्किम में आये थे। जैविक खेती की ओर राज्य को ले जाना हमारे मुख्यमंत्री का दीर्घकालिक (लंबेसमय) योजना है ताकि रोजगार के अवसर पैदा किये जा सके, पर्यटन को बढाया जा सके और सिक्किम राज्य में विकास का एक महत्त्वपूर्ण अंग जुड सके।

२००३ में भारत के किसी राज्य में लंबे समय तक मुख्यमंत्री के तौर पर कार्य कर रहे पवन चामलिंग ने विधान सभा में प्रगतिशील जैविक सिक्किम की घोषणा की थी। जनवरी २०१६ में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने सिक्किम जैविक महोत्सव के शुभांरम करने के लिये सिक्किम की यात्रा के दौरान राज्य के समग्र कृषि मॉडल को अपनाने और पर्यावरण को महत्व देने के लिये प्रशंसा की थी।

कुछ लोग सिक्किम के मुख्यमंत्री को ग्रीन (पर्यावरण) राजनैतिक के रूप में देखते है जबकि दूसरे लोग उनको मिलाजुला मानते है। चामलिंग तीस्ता नदी में पन बिजली के बांध परियोजनाओं को लगातार विस्तार के लिये भी चर्चा में रहे है। उनके इस कदम की आलोचना राज्य के लेप्चा और भूटिया जनजति ने पर्यावरण, उनकी संस्कृति और पवित्र स्थलों पर पड़ रहे बुरे प्रभावों को लेकर की है।

राज्य को जैविक राज्य में बदलने में १२ वर्ष लगे है। ७ वर्ष के पहले चरण में राज्य सरकार ने राज्य व्यापी जागरूकता अभियान चलाने, स्थानीय स्तर पर काम करने वाले अधिकारियों की जैविक खेती के तरीकों के लिये क्षमता को विकसित करने और जैव उर्वरकों और कीटकनाशकों से जुड़े देशी तकनीकी ज्ञान का लिखित रिकार्ड तैयार करने और विकसित करने में लगाया था। भूटिया बताते है कि हमने जैविक खेती से जुड़े तरीकों; मिट्टी परीक्षण की प्रयोगशाला और एकीकृत कीट प्रबंधन के लिये जीविका स्कूलों को स्थापित किया है। इसके साथ में बीजों को तैयार करने के लिये बीज शोधन ईकाइयों की स्थापना भी की है। भूटिया बताते है कि आज की स्थिति में सिक्किम अपने जैविक बीजों की आवश्यकता के ८० प्रतिशत को उत्पादित करता है और लगभग ३२ फसलों से जुड़े जैविक तरीकों को तैयार किया हैं। २०१० में राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम के तहत राज्य को जैविक परिवर्तन की ओर ले जाने की शुरूआत हुई थी।

राज्य के आकार और कृषि भूमि की सच्चाई को ध्यान में रखे तो जैविक राज्य बनाने का निर्णय छोटा कदम नही था। सिक्किम गोवा के बाद दूसरा छोटा राज्य है और इसकी जनसंख्या सबसे कम है। राज्य सरकार के अनुसार सिक्किम में किसान दूसरे राज्यों की तुलना में बहुत कम रसायनों का इस्तेमाल करते है। अब तक १८७ किसानों के समूह को जैविक सर्टिफिकेट दिया गया है और राज्य सरकार ने इस पर आने वाले खर्च को उठाया है। उत्तरी सिक्किम में रहने वाले और बांधों के विरोध से जुड़े कार्यकर्ता दावा लेप्चा सतर्कता के साथ इस बदलाव को आशावादी तरीके से देखते है। लेप्चा बताते है कि ङ्कजैविक खेती के प्रयासों से हमे खुशी है। लेकिन जमीनी स्तर पर चीजें ऊपरी है। मेरा नाम जैविक किसानों की सूची में मेरे बिना परामार्श के शामिल किया गया है। मेरे गाँव में ऐसे भी लोग है जिनके नाम पर जमीन के कागज भी नही है और उनका नाम जैविक किसानों में जोडा गया है। इससे जैविक खेती को अमल में लाना व्यवस्थित नही जान पडता है।ङ्क पहाड़ी भौगोलिक स्थिति और दूर इलाकों में रहने वाले ग्रामीण समुदायों के लिये बाजार के साथ जुडाव को लेकर भी लेप्चा की चिंता है। वह इस ओर भी इशारा करते है कि यदि प्रवासी (बाहर से आने वाले), पर्यटक और सेना की बढ़ती जनसंख्या को लेतो सिक्किम में पर्याप्त भोजन नही है। पश्चिम बंगाल से आने वाला आजैविक उत्पाद राज्य के खाद्य उत्पादन की कमी को पूरा करता है।

इस वर्ष गंगटोक में जैविक किसान बाजार को खोला गया है। दक्षिण सिक्किम की किसान जसोदा तिवारी पिछले कई हफ्तों से एक दुकान में ताजी सब्जियों और हरी चीजों को बेच रही है। जसोदा बताती है कि ङ्गदो साल पहले उनका खेत जैविक खेत में बदल चुका है।ङ्ग वह आगे बताती है कि ङ्गहमारा उत्पादन अभी भी कम है लेकिन मुझे खुशी है कि सिक्किम जैविक खेती की तरफ गया है और हम अब रासायनिक खाने की चिजों को खाकर बिमार नही पडेगे।ङ्ग जब उनसे पोछा गया कि किसान छिपे तौर पर रासायनिक उर्वरकों का इस्तेमाल करने का प्रयास करते है तो वह अपना शिर हिला देती है। नियमों की अनदेखी के बुरे परिणाम भी हो सकते है। २०१४ में लाया गया जिसमें रासायनिक उर्वरकों और कीटकनाशकों की बिक्री, निर्यात और इस्तेमाल को अपराध बनाया गया है।

गंगटोक का बड़ा और जीवंत फलों का लाल बाजार स्थानीय लोगों से भरा है लेकिन खरीददार कोई नही है। यहाँ पर मिलने वाली अधिकतर चीजें पश्चिम बंगाल के सीलीगुडी से आती है। लेकिन इनकी कीमत जैविक बजार से भी कम होती है और यह गंगटोक में रहने वाले लोगों को जैविक उत्पादों की कीमतों को बढ़ाने वाला हो सकता है। पर्यटन के अच्छे लाभ के साथ सिक्किम सरकार ४ मुख्य फसलों अदरक, हल्दी, अनाज और प्रसिद्ध बड़ी इलायची के निर्यात को प्रोत्साहित और बढ़ावा दे रही है। लेकिन इस में परिवहन, उत्पाद में बढोत्तरी, मार्केटिंग (विपणन) और कीमतों की प्रतिस्पर्धा बडी चुनौती खडी करेगी। सिक्किम जैविक मिशन के कार्यकारी निदेशक डॉ.अंबालगन बताते है कि किसानों के समूह के द्वारा ऊगायी जाने वाली इन पांच फसलों के लिये निर्धारित क्षेत्रों को बनाने का प्रयास कर रहे है।

हम लोग इन समूहों के लिये जैविक मूल्य श्रृखंला को भी बनाने का प्रयास कर रहे है।

सिक्किम के किसान नयी व्यवस्था का बीज बो रहे है जिसकी कुछ लहर जैविक सिक्किम के पक्ष में गतिमान जान पडती है। मेघालय के मुख्यमंत्री ने भी अपने राज्य में जैविक खेती को आंगे बढाने में रूचि दिखायी है। इसके अलावा केंद्र सरकार भी टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देने के लियें बहुत से प्रयासों को बढ़ावा दे रही है। डॉ.अंबालान ने बताया कि भारत सरकार ने जैविक मूल्य श्रृंखला प्रबंधन की एक योजना उत्तर-पूर्वी राज्यों के लिये लागू की है। हमने वह कर दिखाया है जो दूसरों ने नही किया है। अब हमे इसे आंगे बढ़ाने के लिये सहायता की भी जरूरत है।

लेखक : रूचा चिटनिस (ruche.chitnis@gmail.com) आफ फोटोग्राफर होने के साथ चेंजिग द नरेटिव-स्टोरी टेलिंग प्रोजेक्ट की संस्थापक भी है। यह प्रोजेक्ट महिलाओं, भूल निवासियों और सामाजिक अंदोलन से जुड़े विकल्पों और कहानियों पर आधारित है।

◆◆

८. नयी किताब

शीर्षक : बोधशाला में शिक्षा-अपने समुदायों के अनुरूप स्कूल
लेखक : रंजन वेंकटेश
प्रकाशक : अदर इंडिया प्रेस

बोधशाला में शिक्षा के लेखक रंजन वेंकटेश के अनुसार स्कूल को सही तरीके से जीवन जीने के तरीकों को खोजने का स्थान हो जाना चाहिये। इस पहल के बिना स्कूल जीवंत नही हो सकते है। लेखक ने शिक्षा को सही मायनों में नैतिकता, सच और झूठ, सही और गलत के साथ जोडा है।

२०१५ में इस किताब को अदर इंडिया प्रेस ने प्रकाशित किया था। इसमें बोधशाला के दर्शन और गतिविधियों को शामिल किया गया है। इसमें लेखक ने उत्तराखंड के टिहरी गढ़वाल के एक अध्ययन केंद्र बोधशाला के बारे में लिखा है। इस किताब में लेखक ने उत्तराखंड के इस स्कूल में जून २००८ से मार्च २०१२ के दौरान संचालन करने के समय के अनुभवों को साझा किया है।

इस स्कूल में छात्र फसलों को उगाने, बीजों को बचाने, पन चकी (पानी से चलने वाली चक्की) में बाजरा और मक्का को पीसने में हिस्सा लेते है और खाने की चीजों को स्वयं के इस्तेमाल और स्थानीय बाजारों के लिये तैयार करते है। दैनिक जीवन में खाने की चीजों को उगाने और पकाने के साथ शिक्षक और छात्र साथ में मिलकर प्रकृति किसानों, इतिहास, अर्थशास्त्र, भाषा और स्वास्थ्य से जुड़े सवालों को हल करते है।

इस पहल में स्थानीय भाषा को नकारने की जगह यह स्थानीय पर्यावरण से सीख को प्रोत्साहित करती है। किताब में भोजन से लेकर अर्थशास्त्र से जुड़े कई प्रयोगों को बताया गया है। छात्रों का बिस्कुट बनाने का निर्णय इसी प्रकार की एक पहल को बताता है। छात्रो ने हिसाब लगाया की बिस्कुट बनाने में आने वाला खर्च बाजार में मिलने वाले बिस्कुट की तुलना में महंगा है। इस अंतर के लिये उन्नहोने पता लगाया की बिस्कुट बनाने में इस्तेमाल होने वाली कुछ विशेष चीजों की गुणवत्ता और लोगों के स्वास्थ से समझौता करके तैयार की गयी है। उदाहरण के लिये घी की जगह हाइड्रोजिनेटेड वेजेटेबल ऑयल और ज्यादा मैदे का इस्तेमाल बिस्कुट बनाने में किया जाता है।

एक उदाहरण के तौर पर जब उन्नहोने हल्दी को उगाना शुरू किया तो उन्नहोने इस तथ्य को पता लगाने के लिये मिशन की शुरूआत करने के पीछे यह था कि कैसे हल्दी पाउडर खडी या साबुत हल्दी से सस्ती है। इसमें उन्नहोने पाया की बाजार में मिलने वाला हल्दी पाउडर गेहूं या मक्के के आटे या रसायनों से मिलावटी होता है।

अन्य कई रोचक प्रयासों को भी- पुस्तक में बताया गया हैं जैसें कि चाची का नमक (८ मसालों से तैयार मसाला नमक) और घर का बना आलू चिप्स। किताब में परियोजनाओं के बारे में बताया गया है जिसमें से एक परियोजना में स्थानीय व्यजनों कोसंकलित किया गया

था जो केवल स्थानीय व्यंजनो को तैयार करने तक सीमित नही था बल्कि स्थानीय कृषि, स्वास्थ, भोजन, विभिन्न खाद्य पदार्थों और उनको बनाने के तरीकों से भी जुड़ा हुआ था।

इस तरह के प्रयोगों को भोजन के अलावा जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी किया गया है जैसे एक हर्बल दंत मंजन,कागज के फिर से इस्तेमाल के लिये बनाना और साबुन बनाना। इनको बनाने के तरीको को किताब में इस उद्देश्य से बताया गया है ताकि इसे साझा घरोघर के रूप में संरक्षित किया का सके।

लेखक ने किताब में वो क्या करने का प्रयास कर रहे थे उससे जुड़े दर्शनों (विचार) की चर्चा की है। लेखक ने जोर देकर बताया है कि भागीदारी एक वैकल्पिक आर्थिक व्यवस्था है जो वैकल्पिक शिक्षा का एक अभिन्न अंग है। जबकि आधुनिक व्यवस्था स्थानीय समुदायों को नुकसान पहुंचा रही है। वैकल्पिक आर्थिक व्यवस्था एवं आत्मनिर्भर समुदायों को बढ़ावा और सहयोग देती है। इस तरह से कोई पता लगा सकता है कि व्यक्ति और परिवार के स्तर पर सही जीविका क्या है और इसका न्याय, सामाजिक सद्भाव, परिस्थितिकीय सद्भाव और मनोवैज्ञानिक संतुष्टता से सीधा संबंध क्या है।

हालाकि स्कूल अब बंद हो चुका है लेकिन बच्चे और शिक्षक ने क्या करने का प्रयास किया उससे जुडी यह किताब उन सभी के लिये रोचक होगी जो भोजन, शिक्षा या सामन्य तौर पर जीवन में रूचि रखते है।

लेखक : शीबा देसोर (desor.shiba@gmail.com)

हम बच्चों के लिए एक विशेष प्रकाशन लेकर आये हैं।
एक पुस्तक भारत के अनोखे खाद्य पदार्थों और उनसे जुड़ी संस्कृतियों के बारे में ।

पाठकों के लिए संदेश:

प्रिय पाठकों, यदि आप समुदाय व संरक्षण की प्रति किसी अलग पते पर प्राप्त करना चाहते है तो कृपया हमें अपना पता kvoutreach@gmail.com पर या नीचे लिखे पते पर भेज दें।

कल्पवृक्ष

डकुमेंटेशन एंड आउटरीच सेंटर, अपार्टमेंट ५, श्री दत्ता कृपा, ९०८
डेक्कन जिमखाना, पूणे ४११००४
महाराष्ट्र – भारत
वेबसाइट : www.kalpavriksh.org

समुदाय व संरक्षण : समुदाय आधारित जैव विविधता संरक्षण तथा आजीविका सुरक्षा अंक ७, नं १. जनवरी – जून २०१६

संकलन और संपादन : मिलिन्द वाणी

परामर्श एवं संपादकीय सहयोग : नीमा पाठक

संपादकीय सहयोग : अनुराधा अर्जुनवाडकर, शर्मिला देव, पंकज शेखसरिया, सीमा भट्ट

कवर फोटोग्राफ : रूचा चिटणिस

अनुवाद : विकल समदरिया

प्रकाशक :
कल्पवृक्ष,
अपार्टमेंट ५, श्री दत्ता कृपा, ९०८,
डेक्कन जिमखाना, पुणे–४११००४.
फोन : ९१–२०–२५६७५४५०,
फैक्स : ९१–२०–२५६५४२३९
ई–मेल : KVoutreach@gmail.com,
वेबसाइट : www.Kalpavriksh.org

आर्थिक सहयोग : मिजेरिओर, आचेव, जर्मनी

निजी वितरण के लिये

प्रकाशित विषयवस्तु (Printed matter)

सेवा में,